भारतीय अर्थव्यवस्था में मंदी की आहट?

संदर्भ

इधर कुछ समय से भारतीय अर्थव्यवस्था में एक गहरा विरोधाभास देखा जा रहा है। नवीनतम सरकारी आँकड़ों के अनुसार भारत की विकास दर 6.6% है। पिछले डेढ़ दशकों में अपने ही प्रदर्शन की तुलना में यह कमज़ोर है, हालाँकि वैश्विक परिदृश्य में तुलनात्मक दृष्टि से यह संतोषजनक है, लेकिन कई अन्य महत्त्वपूर्ण संसूचकों पर नज़र डालें तो अर्थव्यवस्था की स्थिति निराशाजनक लगती है।

फरवरी 2019 के आँकड़ों से पता चलता है कि कोर सेक्टर में केवल 2.1% वृद्धि हुई है और औद्योगिक उत्पादन सूचकांक मात्र 0.1% ऊपर गया है। भारत की निर्यात वृद्धि पिछले पांच वर्षों में लगभग शून्य रही है। बचत और निवेश की दरें 2003 में 30% की सीमा पार करने के बाद 2008 में 35% प्रतिशत तक पहुँच गईं, जिससे भारत पूर्वी एशिया की तीव्र वृद्धि वाली अर्थव्यवस्थाओं जैसा लगने लगा। लेकिन अभी ये 30% प्रतिशत से नीचे चली गई हैं।

MPC रिपोर्ट में भी है उल्लेख

हाल ही में जारी हुई द्विमासिक मौद्रिक नीति समिति की रिपोर्ट से पता चलता है कि विकास दर में कमी और निवेशक धारणा पर दबाव की वज़ह से ब्याज दरों में कमी की गई। इस नीति में ग्रामीण दबाव का उल्लेख करते हुए इसके लिये वित्तीय सहायता के तौर पर तेल की कीमतों में तेज़ी और बढ़ती मुद्रास्फीति को लेकर सतर्कता बरतने को कहा गया है। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि खाद्य और ईंधन को छोड़कर मुद्रास्फीति 5.5% प्रतिशत के उच्च स्तर पर बनी हुई है और यह पिछले 12 महीनों से ऊँचे स्तर पर ही टिकी है।

मंदी की आहट

भारत की आज़ादी के बाद की यात्रा एक मामूली कृषिप्रधान देश के रूप में शुरू हुई थी। एक लंबी और श्रमसाध्य यात्रा के बाद भारत ने दो अंकीय वृद्धि दर को भी छुआ। लेकिन इधर कुछ समय से भारत की विकास दर में लगातार गिरावट देखने को मिल रही है और चालू वर्ष के लिये यह 7.4% से गिरकर 7% हो गई है।

गत सप्ताह IMF ने 2019-20 और 2020-21 में देश की GDP में होने वाली वृद्धि को लेकर अपने अनुमान में संशोधन किया और दोनों वर्षों के अनुमान को 20 आधार अंक कम करके क्रमशः 7.3% तथा 7.5% कर दिया। इससे पहले विश्व बैंक ने भी भारत में GDP वृद्धि के अनुमान को संशोधित करके घटाया था और कहा था कि 2019-20 में यह 7.2% रह सकती है। उसने भी 20 आधार अंकों की कमी की थी। लेकिन न तो विश्व बैंक और न ही IMF के पास भारत में आँकड़ों का संग्रह करने का कोई स्वतंत्र जरिया है।

विश्व बैंक अपने डेटा टेबल के लिये स्थानीय मुद्रा से जुड़े आँकड़ों का इस्तेमाल करता है जो कि हर देश जारी करता है। लेकिन सवाल यह है कि जब घरेलू एजेंसियां अपने आकलन के तरीके में बदलाव लाती हैं तो निरंतरता बनाए रखने के लिये विश्व बैंक अपनी आकलन पद्धति में क्या बदलाव लाता है? इसके लिये विश्व बैंक और IMF अपने विगत पूर्वानुमानों और वास्तविक आँकड़ों पर नजर रखते हैं।

आर्थिक वृद्धि क्या है?

आर्थिक वृद्धि का अर्थ है वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि तथा प्रभावी रूप से इसका मतलब है राष्ट्रीय आय, राष्ट्रीय उत्पादन और कुल व्यय में वृद्धि। आर्थिक विकास होने से जीवन स्तर में वृद्धि होती है और वस्तुओं तथा सेवाओं की अधिक खपत होती है। परिणामस्वरूप, आर्थिक विकास को मैक्रोइकोनॉमिक्स के Holy Grail के रूप में देखा जाता है। आर्थिक विकास गरीबी में कमी, बेरोज़गारी में कमी, सार्वजनिक सेवाओं में सुधार तथा GDP अनुपातों की तुलना अपेक्षाकृत कम ऋण आदि जैसे मैक्रोइकोनॉमिक्स के विभिन्न आर्थिक उद्देश्यों को प्राप्त करने में मदद कर सकता है।

आर्थिक मंदी क्या है?

- धन की कमी को विकास की धीमी गति के कारणों में से एक माना जा सकता है। जबकि प्रचलन में मुद्रा कोई समस्या नहीं है, जिसमें औपचारिक अर्थव्यवस्था का अधिकांश धन लेन-देन के लिये इस्तेमाल किया जाता है। लेकिन बैंक में जमा धन (M3 या Broad Money) जो प्रचलित मुद्रा (Hard Currency) का आठ गुना है, उसे बाज़ार में आने का रास्ता नहीं मिल पा रहा।
- हमारी वित्तीय प्रणाली जो आधार धन (Base Money) को M3 में परिवर्तित करती है, सुचारु रूप से काम नहीं कर रही है। जब बैंक नया ऋण देते हैं, तो वे 'पैसा' बनाते हैं, लेकिन जब वित्तीय प्रणाली प्रभावी ढंग से काम नहीं करती तो धन सृजन की यह प्रक्रिया धीमी हो जाती है और M3 से M0 (जिसे धन गुणक यानी Money Multiplier भी कहा जाता है) का अनुपात गिर जाता है।
- इसे बढ़ते NPA के दौर में ऋण चाहने वालों को ऋण देने की बैंकिंग क्षेत्रों की विफलता में देखा जा सकता है।
- इसके अलावा गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (NBFC) की हालिया विफलता की वज़ह से भी ऋण देने की प्रक्रिया धीमी हो गई है।
- सरकार इन मुद्दों को संबोधित करने में भी विफल रही है क्योंकि खराब ऋणों का एक और दौर बड़ी मात्रा में पूंजी को जोखिम की ओर ले जा सकता है।

चिंताजनक हैं वर्तमान हालात

भारत पर नज़र रखने वालों के लिये सबसे बड़ी चिंता का विषय देश में रोज़गार की स्थिति है। इस बारे में आधिकारिक आँकड़े जारी करने पर रोक लगा दी गई है, लेकिन **अजीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी** और **सेंटर फॉर मॉनिटरिंग द इंडियन इकोनॉमी** के विस्तृत अध्ययन से पता चलता है कि हालात अच्छे नहीं हैं।

विमुद्रीकरण ने भी छीना रोज़गार?

स्टेट ऑफ वर्किंग इंडिया 2019 नामक इस रिपोर्ट से पता चलता है कि बीते दो वर्षों में असंगठित क्षेत्र में काम करने वाले लगभग 50 लाख लोगों ने अपना रोज़गार खो दिया है। यह रिपोर्ट CMIE द्वारा हर चार महीने पर 1,60,000 परिवारों के बीच किये गए सर्वेक्षण के अध्ययन पर आधारित है। रिपोर्ट में ऐसा कोई दावा नहीं किया गया है कि लोगों के बेरोज़गार होने की मुख्य वज़ह विमुद्रीकरण है। उपलब्ध आँकड़ों से दोनों के बीच कोई सीधा रिश्ता नहीं जुड़ता। रिपोर्ट के अनुसार, नौकरी खोने वाले 50 लाख पुरुषों में ज़्यादातर कम शिक्षित हैं।

सरकारी आँकड़ों में स्पष्टता का अभाव

- जहाँ तक सवाल आँकड़ों का है तो पिछले दिनों बेरोज़गारी को लेकर NSSO के आँकड़ों पर काफी विवाद हुआ और सरकार ने उन्हें आधिकारिक रूप से जारी ही नहीं किया।
- मीडिया के माध्यम से यह तथ्य सामने आया कि NSSO ने 2017-18 में बेरोज़गारी की दर 6.1% प्रतिशत आँकी है, जो पिछले 45 साल का सर्वोच्च स्तर है।
- इसके बाद नीति आयोग के उपाध्यक्ष राजीव कुमार ने कहा कि ये आँकड़े अंतिम नहीं हैं क्योंकि सर्वेक्षण अभी पूरा नहीं हुआ है।
- लेकिन इसके बाद भी सरकार ने स्पष्ट नहीं किया कि बेरोज़गारी पर सरकारी आँकड़े हैं क्या? बेशक, बेरोज़गारी के मुद्दे पर राजनीति नहीं होनी चाहिये तथा इस पर होने वाली बयानबाज़ी से बचा जाना चाहिये, लेकिन इस पर कोई बात ही न करना इसे और खतरनाक बना सकता है।
- बेरोज़गारी को सिर्फ सरकारी नीतियों की विफलता के रूप में देखना एक तरह का सरलीकरण है। अर्थव्यवस्था के विविध क्षेत्रों का उतार-चढ़ाव पूरी आगे बढ़ा, लेकिन फिर विभिन्न कारणों से इसमें शिथिलता आ गई।
- रोज़गार उपलब्ध कराने में सबसे अधिक योगदान विनिर्माण क्षेत्र का होता है, जो काफी समय से सुस्त चल रहा है।
- बेरोज़गारी दूर करने के लिये चीन की तरह हमें भी श्रम प्रधान उद्योगों को बढ़ावा देना होगा और कुछ ऐसा करना होगा कि इनमें उद्योगपतियों की खास दिलचस्पी पैदा हो। व्यापार एक ऐसा क्षेत्र है जहाँ भारत को स्वाभाविक बढ़त हासिल है। चीन में बढ़ती मज़दूरी को देखते हुए हमारे लिये निर्यात बढ़ाना मुश्किल नहीं होना चाहिये था। इससे रोज़गार पैदा होते और कृषि पर भी इसका अच्छा असर होता। लेकिन निर्यात में बढ़ोतरी केवल श्रम सस्ता होने से नहीं हो जाती और निर्यात में आ रही कमी ने समस्या को और बढ़ाया है।

इसके अलावा भी कई कई अन्य चुनौतियाँ हैं- कमज़ोर और लड़खड़ाता रियल एस्टेट सेक्टर, कृषि में समस्याएँ, भारत की ऊर्जा पारिस्थितिकी तंत्र में बाहरी निर्भरता के स्तर की चिंता, चरमराता शहरी बुनियादी ढाँचा, स्थिर पूंजी प्रवाह। ये सभी अर्थव्यवस्था में मंदी की स्थिति बनाने में मदद कर रही हैं।

डेमोग्राफिक डिविडेंड

भारत की आबादी में इस समय नौजवानों की संख्या सबसे ज़्यादा है। अर्थशास्त्र की भाषा में इसे 'डेमोग्राफिक डिविडेंड' कहा जाता है, यानी यह आबादी की एक ऐसी स्थिति है, जो किसी भी देश को बहुत बड़ा लाभ पहुँचा सकती है, क्योंकि आपके पास उत्पादक श्रम-शक्ति का अनुपात सबसे ज़्यादा है। लेकिन हम इसका लाभ नहीं उठा पा रहे, क्योंकि हमारे पास इस श्रम-शक्ति को देने के लिये पर्याप्त काम ही नहीं है...रोज़गार के अवसर ही नहीं हैं।

यह काम बड़े पैमाने पर निवेश से ही हो सकता है और अर्थशास्त्रियों का कहना है कि इतने बड़े पैमाने पर निवेश देश में तभी आएगा, जब श्रम सुधार किये जाएंगे, यानी श्रम कानूनों को बदला जाएगा। लगभग वैसे ही, जैसे चीन ने किया। हमारे देश में श्रम सुधार एक जटिल व संवेदनशील मामला माना जाता है, इसीलिये हमारे यहाँ यह विमर्श कभी शुरू ही नहीं हो सका कि भारत जैसे श्रम-बहुल देश में किस तरह के श्रम सुधारों की ज़रूरत है।

क्या किया जा सकता है?

- आर्थिक संकट को हल्का करने का एक तरीका सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के निजीकरण को गति देना है, क्योंकि यह अब एक स्थापित सत्य है कि राज्य के स्वामित्व वाली बैंकिंग प्रणाली के साथ संरचनात्मक समस्याएँ लगातार बनी रहती हैं।
- बैंकों की ब्याज दरों को कम करने से ऋणदाताओं की क्षमता को भी बढ़ाया जा सकता है ताकि ऋण का विस्तार हो सके और दुनिया की सबसे तेज़ी से बढ़ती प्रमुख अर्थव्यवस्था में विकास को बढ़ावा मिले।

आगे की राह

हाल के वर्षों में भारत का विकास प्रभावशाली रहा है, लेकिन हमारे विकास में स्थानिक संरचनात्मक समस्याओं का बना रहना अभिशाप समान है। भारत ने पिछले 15-20 वर्षों में जिस वृद्धि दर को निरंतर बनाए रखा है, उसे आगे भी जारी रखने के लिये बुनियादी ढाँचे, विनिर्माण और कृषि में बड़ी मात्रा में निवेश की आवश्यकता है। इसे पूरा करने के लिये एक मज़बूत वित्तीय ढाँचा तैयार करना होगा जो विकास की ओर बढ़ते भारत की ज़रूरतों और मांगों को पूरा कर सके।

मुद्रा आपूर्ति के उपाय: M0, M1, M2, M3 और M4

- किसी विशेष समय पर जनता के बीच प्रचलित धन की कुल मात्रा मुद्रा आपूर्ति कहलाता है।
- भारत में मुद्रा आपूर्ति के उपायों को M0 के साथ चार श्रेणियों M1, M2, M3 और M4 में वर्गीकृत किया गया है।
- यह वर्गीकरण अप्रैल 1977 में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा किया गया था।
- **रिज़र्व मनी-Reserve Money (M0):** इसे हाई-पावर्ड मनी, मौद्रिक आधार, आधार धन आदि के रूप में जाना जाता है।
- **M0** = प्रचलन में मुद्रा + RBI के पास बैंकर्स डिपॉजिट + RBI के पास अन्य डिपॉजिट। यह अर्थव्यवस्था का मौद्रिक आधार है।
- **नैरो मनी-Narrow Money (M1)**= प्रचलन में मुद्रा + बैंकिंग प्रणाली के साथ डिमांड डिपॉजिट (करेंट अकाउंट, सेविंग्स अकाउंट) + RBI के पास अन्य डिपॉजिट
- **M2** = M1 + डाकघर बचत बैंकों की बचत जमा
- **ब्रॉड मनी-Broad Money (M3)**= M1 + बैंकिंग प्रणाली के साथ टाइम डिपॉजिट
- **M4** = M3 + डाकघर बचत बैंकों के पास सभी प्रकार के डिपॉजिट

अभ्यास प्रश्न: भारतीय अर्थव्यवस्था के सम्मुख विभिन्न चुनौतियों का उल्लेख करते हुए उनके समाधान हेतु उपाय सुझाइये।

PDF Refernece URL: https://www.drishtiias.com/hindi/printpdf/slowdown-in-indian-economy